**ओ३म्**

**वैदिक वर्ण व्यवस्था के सन्दर्भ में**

**‘महर्षि दयानन्द प्रोक्त वेद सम्मत ब्राह्मण वर्ण के गुण-कर्म-स्वभाव’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

यह जड़-चेतन संसार ईश्वर से उत्पन्न हुआ है। ईश्वर, जीवात्मायें और प्रकृति, तीन नित्य सत्तायें हैं जिनमें ईश्वर व जीवात्मा चेतन एवं प्रकृति जड़ पदार्थ हैं। ईश्वर व जीवात्मा संवेदनाओं से युक्त व प्रकृति संवेदनारहित है। जीवात्माओं के पूर्व जन्म में अर्जित प्रारब्ध वा कर्मों के फलों एवं सुख-दुःख रुपी भोग प्रदान करने के लिए ही ईश्वर ने इस संसार को रच कर जीवात्मा को विभिन्न योनियों में उत्पन्न किया है। हमें मनुष्य योनि वा इसमें माता-पिता, भाई व बहिन सहित जो परिवेश मिला है वह सब हमारे प्रारब्ध पर आधारित है। मनुष्यों की उत्पत्ति एक प्रकार से होने के कारण संसार के सभी मनुष्यों की जाति एक है। जन्मना जाति का सिद्धान्त अनावश्यक है जिससे सामाजिक विषमता उत्पन्न हाती है, अतः इसे समाप्त किया जाना चाहिये। मनुष्यों के गुण-कर्म-स्वभाव भिन्न-भिन्न होते हैं जिसमें बहुत बड़ा कारण हमारे पूर्व जन्म का प्रारब्ध और इस जन्म के विद्यादि गुणों पर आधारित कर्म व संस्कार होते हैं। मनुष्यों के इन गुण-कर्म व स्वभाव में भिन्नता व समाज की आवश्यकता के अनुरुप उनका वर्गीकरण कर वेदानुसार चार वर्णों यथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र का विधान हमारे प्राचीन ऋषियों ने किया जो ईश्वरीय ज्ञान वेद पर आधारित है। इससे सम्बन्धित यजुर्वेद का मन्. 31/11 हैः

ब्राह्मणोस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।

ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याम् शूद्रौ अजायत।।

इस मन्त्र का अर्थ है कि जो (अस्य) पूर्ण व्यापक परमात्मा की सृष्टि में मुख के सदृश सब में मुख्य उत्तम हो, वह (ब्राह्मण) ब्राह्मण, (बाहू) **‘बाहुर्वै बलं बाहुर्वै वीर्यम्’** (शतपथ ब्राह्मण) बल वीर्य का नाम बाहु है, वह जिसमें अधिक हो, सो (राजन्यः) क्षत्रिय, (ऊरू) कटि के अधो और जानु के ऊपर के भाग का नाम है। जो सब पदार्थों और सब देशों में ऊरू के बल से जावे, आवे, प्रवेश करे, वह (वैश्यः) वैश्य और (पद्भ्याम्) जो पग के अर्थात् नीचे अंग के सदृश मूर्खत्वादि गुण वाला हो, वह शूद्र है। यह वेद मन्त्र का सत्यार्थ है। इसमें कहीं नहीं कहा कि ब्राह्मण माता-पिता से ब्राह्मण, क्षत्रियों से क्षत्रिय आदि उत्पन्न होते हैं। मुख के सदृश से तात्पर्य यह है कि जैसा मुख सब अंगों में श्रेष्ठ है, वैसे पूर्ण विद्या और उत्तम गुण-कर्म-स्वभाव से युक्त होने से मनुष्य जाति में उत्तम ब्राह्मण कहाता है। जब परमेश्वर के निराकार होने से मुखादि अंग ही नहीं है तो मुख से उत्पन्न होना असंभव है। अतः ब्राह्मण श्रेष्ठ गुणों, कर्मों व स्वभाव को धारण कर आचरण करने से होता है, यह वेद का विधान है।

ब्राह्मण के लिए धारण व आचरण करने योग्य कौन-कौन से गुण कर्म व स्वभाव का वेद एवं वैदिक साहित्य में विधान है, इसका वर्णन महर्षि दयानन्द ने स्वरचित ग्रन्थ संस्कार विधि में किया है और अपने अन्य ग्रन्थों में भी इस पर प्रसंगानुसार प्रकाश डाला है। संस्कार विधि में वह वेदानुकूल मनुस्मृति व गीता के श्लोकों को उद्धृत करते हैं। यह श्लोक निम्न हैः

**अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा। दानं प्रतिग्रहश्चैव ब्राह्मणानामकल्पयत्।।1।। मनुस्मृति।।**

**शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च। ज्ञानं विज्ञानमस्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्।।2।। गीता।।**

अर्थ--एक-निष्कपट होके प्रीति से पुरुष पुरुषों को और स्त्री स्त्रियों को पढ़ावे। दो-पूर्ण विद्या पढ़ें। तीन-अग्निहोत्रादि यज्ञ करें। चैथा-यज्ञ करावें। पांच-विद्या अथवा सुवर्ण आदि का सुपात्रों को दान देवें। छठा-न्याय से धनोपार्जन करनेवाले गृहस्थों से दान लेवें भी। इनमें से तीन कर्म-पढ़ना, यंज्ञ करना, दान देना धर्म हैं और तीन कर्म-पढ़ाना, यज्ञ कराना, दान लेना, जीविका हैं। परन्तु--प्रतिग्रहः प्रत्यवरः।। (मनुस्मृति) जो दान लेना है वह नीच (बुरा) कर्म है, किन्तु पढ़ा कर और यज्ञ करा कर जीविका करनी उत्तम है।।1।।

(शमः) मन को अधर्म में न जाने दें, किन्तु अधर्म करने की इच्छा भी न उठने देंवे। (दमः) श्रोत्रादि इन्द्रियों को अधर्माचरण से सदा दूर रक्खे, दूर रखके धर्म ही के बीच में प्रवृत्त रक्खे। (तपः) ब्रह्मचर्य, विद्या, योगाभ्यास की सिद्धि के लिए शीत उष्ण, निन्दा-स्तुति, श्रुधा-तृषा, मानापमान आदि द्वन्द्वों को सहना। (शौचम्) राग-द्वेष-मोहादि से मन और आत्मा को तथा जलादि से शरीर को सदा पवित्र रखना। (क्षान्तिः) क्षमा, अर्थात् कोई निन्दा-स्तुति आदि से सतावें तो भी उन पर कृपालु रहकर क्रोधादि का न करना। (आर्जवम्) निरभिमान रहना, दम्भ, स्वात्मश्लाघा, अर्थात् अपने मुख से अपनी प्रशंसा न करके नम्र सरल, शुद्ध, पवित्रभाव रखना। (ज्ञानम्) सब शास्त्रों को पढ़के, विचारकर उनके शब्दार्थ-सम्बन्धों को यथावत् जानकर पढ़ाने का पूर्ण सामर्थ्य करना। (विज्ञानम्) पृथिवी से लेके परमेश्वर-पर्यन्त पदार्थों को जान और क्रियाकुशलता तथा योगाभ्यास से साक्षात् करके यथावत् उपकार ग्रहण करना-कराना। (आस्तिक्यम्) परमेश्वर, वेद, धर्म, परलोक, परजन्म, पूर्वजन्म, कर्मफल और मुक्ति से विमुख कभी न होना। ये नव कर्म और गुण, धर्म में समझना। सबसे उत्तम गुण-कर्म-स्वभाव को धारण करना। यह गुण-कर्म जिन व्यक्तियों में हों वे ब्राह्मण और ब्राह्मणी होवें। विवाह भी इन्हीं वर्ण के गुण-कर्म-स्वभावों को मिलाकर ही करें। मनुष्यमात्र में से इन्हीं (गुण, कर्म व स्वभावों से युक्त मनुष्यों को ही, अन्य इन गुणों से रहित मनुष्यों को नहीं) को ब्राह्मण वर्ण का अधिकार होवे।।2।। यह ध्यान देने योग्य बात है कि महर्षि दयानन्द स्वयं जन्मना उच्च कुलीन ब्राह्मण थे तथापि वेदाध्ययन कर व वेदों का सत्य तात्पर्य जानकर उन्होंने पक्षपात से मुक्त होकर ब्राह्मण वर्ण का होने व कहलाने के सत्य, यथार्थ व वास्तविक तात्पर्य को प्रस्तुत किया है। प्रत्येक बुद्धिमान यह बात स्वीकार करेगा कि जब हमारे देश व समाज में ऐसे बुद्धिमान ब्राह्मण होंगे तभी देश व समाज की उन्नति होगी अन्यथा सामाजिक समरसता व देश व समाजोन्नति की बात करना अन्धेरे में तीर चलाने जैसा निरर्थक कार्य है। इन वैदिक विचारों से जन्मना जातिवाद का भी खण्डन हो रहा है क्योंकि ब्राह्मण परिवार में सभी सन्तानें इन गुणों वाली नहीं होती हैं। जो नहीं हों, उनका वर्ण गुण-कर्म-स्वभावानुसार इतर तीन वर्णों में से किसी एक में निर्धारित किया जाना चाहिये। महर्षि दयानन्द ने इससे आगे क्षत्रिय, वैश्य व शूद्रों के लक्षण वा गुण-कर्म-स्वभावों का भी वर्णन किया है जो श्रेष्ठ समाज का आधार है। पाठकों से निवेदन है कि वह संस्कार विधि का अध्ययन कर उन्हें वहीं देखने का कष्ट करें।

हम आशा करते हैं कि वैदिक व सनातन धर्म के बुद्धिमान एवं विवेकी लोग महर्षि दयानन्द के विचारों पर सद्भावना पूर्वक विचार करेंगे और इसे समाज में प्रतिष्ठा देने के अपनी ओर से हर सम्भव उपाय करेंगे जिससे भविष्य का समाज श्रेष्ठ गुण-कर्म-स्वभाव सम्पन्न समाज बन सके।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**